वर्ष-१३ अंक-८
२७ अप्रैल २०१७

पंजीयन संख्या म.प्र./भोपाल 32/2015-17
एक प्रति- २०.०० रु.

ओ३म्

वैदिक रवि

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रमुख पत्र

संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है ..

एक दृष्टि में आर्य समाज

- आर्य समाज की मान्यता का आधार सत्य सनातन वैदिक धर्म है।
- सनातन वह है जो सदा से था, सदा रहेगा। सत्य सनातन धर्म का आधार वेद है।
- वेद ज्ञान का मूल परमात्मा है।
- यही सृष्टि के प्रारंभ का सबसे पहला ज्ञान, पहली संस्कृति और समस्त सत्य विद्याओं से पूर्ण है।
- वेद ज्ञान किसी जाति, वर्ण, सम्प्रदाय या किसी महापुरुष के ज्ञान के अनुसार नहीं है और न ही किसी समय व स्थान की सीमा में बन्धा है।
- परमात्मा की कल्याणी वाणी वेद समस्त प्राणियों के लिए और सदा के लिए हैं।
- इसे पढ़ना-पढ़ाना श्रेष्ठ (आर्य) जनों का परम धर्म है।
- ईश्वर को सभी मानते हैं इसलिए विश्व शान्ति इसी ईश्वरीय ज्ञान वेद से संभव है।
- आर्य समाज-अविद्या, कुरीतियों, पाखण्ड व जाति प्रथा जैसी सामाजिक बुराईयों को दूर करने वाला तथा सत्य ज्ञान व सनातन संस्कृति का प्रचारक है।

ओ३म्
वैदिक-रवि
मासिक

वर्ष-१३ अंक-८

२७ अप्रैल २०१७
(सार्वदेशिक धर्मार्थ सभा के निर्णयानुसार)
सृष्टि सम्वत् १,९६,०८,५३११६
विक्रम संवत् २०७४
दयानन्दाब्द १८४

सलाहकार मण्डल
राजेन्द्र व्यास
पं.रामलाल शास्त्री 'विद्या भास्कर'
डॉ. रामलाल प्रजापति
वरिष्ठ पत्रकार

प्रधान सम्पादक
श्री इन्द्रप्रकाश गांधी
कार्या.फोन: ०७५५ ४२२०५४९

सम्पादक
प्रकाश आर्य
फोन: ०७३२४२२६५६६

सह-सपादक
मुकेश कुमार यादव
फोन: ९८२६१८३०९५

सदस्यता
एक प्रति- २०-०० रू.
वार्षिक-२००-०० रू.
आजीवन-१०००-०० रू.

विज्ञापन की दरें

आवरण पृष्ठ २ एवं ३	५०० रू.
पूर्ण पृष्ठ (अंदर)	-४००रू
आधा पृष्ठ (अंदर का)	२५० रू.
चौथाई पृष्ठ	१५० रु

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृष्ठ
1.	धर्म के नाम पर अधर्म क्यों	4
2.	महर्षि दयानन्द ने बताया	7
3.	व्यक्तित्व विकास	8
4.	इन्द्रियों को वश में रखने की विधि	11
5.	पाप से दूर हों	12
6.	ये किसकी नजर लगगई मेरे वतन को	13
7.	वो सुबह कभी तो आयेगी	15
8.	वेद ही सब सत्य विद्याओं के भण्डार क्यों	16
9.	नारियों के अधिकार व कर्तव्य	18
10.	उन्नति के लिये आवश्यक चिन्तन	20
11.	कर्म फल सिद्धान्त	22
12.	स्वाध्याय पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारूप	24
13.	महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का जन्म	26

मई माह के पर्व त्यौहार एवं जयंती

■ आदि शंकराचार्य जयंती, संत सूरदास जयंती, श्रमिक दिवस	१
■ प्रेस स्वतंत्रता दिवस	३
■ रविन्द्र नाथ टैगोर जयंती	७
■ बुद्ध पूर्णिमा, महर्षि भृगु जयंती	१०
■ विश्व दूरसंचार दिवस, रानी अहिल्या बाई होल्कर जयंती	१७
■ राजा राममोहन राय जयंती	२२
■ पं. नेहरू पुण्य तिथि	२७
■ वीर सावरकर एवं छत्रसाल जयंती, महाराणा प्रताप जयंती	२८
■ गुरू अर्जुन देव जी पुण्यतिथि	२९
■ धूम्रपान निषेध दिवस	३१

सम्पादकीय :

धर्म के नाम पर अधर्म क्यों ?

भारत एक प्रजातन्त्रीय देश है जिसके नागरिकों को अनेक प्रकार की स्वतन्त्रता और अधिकार संविधान के अन्तर्गत दिए गए हैं। प्राप्त अधिकारों व स्वतन्त्रता के साथ ही संवैधानिक रूप से कुछ कर्तव्यों और अवश्य पालनीय सामाजिक नियमों को मानने का निर्देश में संविधान में निहीत है। अधिकार और कर्तव्य का जब तब ईमानदारी से पालन होता है, किसी की उपेक्षा या स्वतन्त्रता के नाम पर शोषण अतिक्रमण नहीं होता है तब तक ही किसी राष्ट्र की व्यवस्था व्यवस्थित रह सकती है।

व्यक्ति व किसी भी संगठन से बड़ा राष्ट्र होता है। **"राष्ट्र प्राणों से बड़ा होता है, हम मिटते हैं तो राष्ट्र खड़ा होता है।"** शास्त्रों ने, विद्वानों ने धर्म की 5 प्रकार से व्याख्या की है। व्यक्तिगत धर्म, पारिवारिक धर्म, सामाजिक धर्म, राष्ट्रीय धर्म, वैश्विक धर्म। इसलिए व्यक्तिगत धर्म से बड़ा राष्ट्रीय धर्म होता है। यही राष्ट्रीय धर्म प्रत्येक नागरिक के लिए सर्वोपरी है और होना भी चाहिए।

किन्तु अतीत साक्षी है प्रजातन्त्र के इस देश में महत्वाकांक्षी विचारों वाली राजनीति ने संविधान के आदर्शों, उसकी मान्यताओं को, मानवीय, राष्ट्रीय अधिकारों की अव्हेलना करने वाले व्यक्तियों का पोषण, और राष्ट्रीयता का शोषण किया है। अपने स्वार्थ में मजहबी विचारधाराओं को आश्रय देकर उनकी अनुचित मांगों व कर्तव्यों को मात्र अपना समर्थन जुटाने में वे उचित, अनुचित सब मान्य करते रहे। इसका लाभ उठाते हुए जब किसी को कोई बात मनवानी हो तो उसके पक्ष में धर्म रूपी शस्त्र काम आता है। किसी बात को मानने या किसी को न मानने में, दलील देकर धर्म की दुहाई देकर सबको चुप करवा दिया जाता है।

इस प्रकार स्वार्थ जहां आता है, वहां अपनी बात को धर्म के नाम पर भुनाने का हथकण्डा वर्षों से चल रहा है। इसी साम्प्रदायिकता का और तुष्टिकरण का ही परिणाम पाकिस्तान का जन्म है।

जिस माटी में पले बड़े हुए उस माटी से अपने मजहब या धर्म को राष्ट्र से बड़ा बताकर कोई भी कार्य को महत्व देना सरासर गलत है।

आज देश की जनसंख्या बेहिसाब बढ़ती जा रही है, देश का एक तपका सन्तान वृद्धि की उपेक्षा कर तेजी से देश की व्यवस्था को बिगाड़ रहा है। देश की आर्थिक स्थिति, बेरोजगारी, आवास व्यवस्था, खाद्यान्न व्यवस्था सबको प्रभावित कर राष्ट्र हित के विरूद्ध कार्य कर रहा है। जबकि शासन छोटे परिवार के नाम पर अनेक प्रकार के प्रयत्न करता है। किन्तु वही सबकुछ हो धर्म के नाम पर कुछ विचारधारा द्वारा राष्ट्र की उपेक्षा की जा रही है। क्या यंह मजहबी धर्म की आड़ में राष्ट्रीय धर्म की उपेक्षा और असहयोग नहीं हो रही है ? क्या अपनी भावनाओं के कारण राष्ट्र की करोड़ों जनता की समस्याओं को कुचलते हुए राष्ट्र को क्षति पहुंचाना क्या धर्म है ?

हाल ही में सोनू निगम ने मस्जिद से माईक पर आने वाली आवाज के संबंध में आपत्ती उठाई। इस पर तरह तरह की चर्चा और विवाद खड़ा हो गया।

उसकी पीड़ा जो करोड़ों–करोड़ों भारतीयों की है, कोई उस सत्य को स्वीकार नहीं करना चाहता है। अन्यान्य कारणों से इस प्रकार से होने वाले उस सामाजिक कष्ट को अनदेखा कर कोई सही कहना नहीं चाहता।

यह सरासर धर्म के नाम पर अधर्म है, इस्लाम परमात्मा को साकार नहीं मानता है। फिर वह अजान से आवाज देकर किसको सुनाना चाहते हैं ? वैसे भी धर्म प्रदर्शन का विषय नहीं, मात्र बोलचाल का नहीं है, वह तो आन्तरिक विषय व मौन कर्म है। धर्म आचरण का विषय है **"धारणात्धर्म इत्याहुः"** जो धारण किया जावे, वह धर्म है। प्रदर्शन या मात्र बाहरी चर्चा धर्म का विषय नहीं, वह तो आत्मा का आन्तरिक और शान्त प्रयास है। परमात्मा की उपासना, प्रार्थना, शान्त चित्त से, एकाग्र मन से की जाती है। भारत में प्रत्येक को अपनी धार्मिक मान्यता को करने की स्वतन्त्रता है। परन्तु धर्म ये नहीं कहता कि अपनी मान्यता के लिए किसी दूसरे को परेशान करना चाहिए। यह धर्म नहीं अधर्म है। धर्म कहता है **"आत्मानः प्रतिकूलानी परेषां न समाचरेत्।"** अर्थात् हम दूसरे से अपनी आत्मा के समान व्यवहार करें। जो अपनी आत्मा को अच्छा लगता है वैसा व्यवहार दूसरों से करें। जो व्यवहार अपने को अच्छा नहीं लगता वह व्यवहार हम दूसरों से न करें।

अजान देना है तो देवें इसमें किसी को कोई आपत्ती नहीं होनी चाहिए। किन्तु यह नहीं होना चाहिए कि बड़ी ऊँची आवाज में कानों को कष्ट देती आवाज में अजान जो औरों के लिए उपयोगी नहीं है कष्टदायी है, वह करना ही धर्म है।

विशेषकर सुबह 5 बजे, 4.30 बजे होने वाली अजान से अनेक व्यक्ति प्रभावित होते हैं। कई व्यक्ति बीमारी से जूझ रहे हैं, उन्हें डॉ. ने आराम की सलाह दी होती है। रात में नींद नहीं आती, नींद की दवा, गोली लेकर सोते हैं जब सुबह सुबह नींद आती है, तो अजान से बीच में नींद खुल जाती है। यह उनके लिए कष्ट का कारण है। बीमार व्यक्ति को पूर्ण आराम की आवश्यकता होती है, उसके अभाव में वह कभी स्वस्थ हो ही नहीं पायेगा, ऐसा विघ्नकारी कर्म धर्म नहीं है।

कोई व्यक्ति मेहनत, मजदूरी करके काम से लौटकर देर रात में सोता है, सुबह फिर काम करने जाता है, शरीर को आराम जरूरी है अन्यथा उस पर बुरा असर होगा पर अजान की आवाज उसे समय से पहजे उठा देती है। कोई विद्यार्थी दिन के अशान्त चिल्लापुकार के वातावरण के स्थान पर शान्ति से देर रात को पढ़ाई करके सोता है, किन्तु अजान से उसे बीच में उठना पड़ता है, नींद पूरी नहीं होती है। इसका स्वास्थ्य व मस्तिष्क पर गलत प्रभाव होता है, यह सब क्या है ?

पहले बिना माईक के भी अजान होती थी सुबह की अजान एक साथ व कुछ समय के लिए होती थी। अब एक शहर में जहॉ कई मस्जिदें हैं अब वहॉ से लम्बे समय तक और अलग अलग समय में होती हैं। यह क्यों है ? यह जानबूझकर अपनी साम्प्रदायिक विचारधारा का प्रभाव बढ़ाने की योजना है। क्या इस प्रकार की शारीरिक व मानसिक प्रताड़ना धर्म है ?

जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण और वैसे ही ध्वनि प्रदूषण स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, सामाजिक अव्यवस्था है, शासकीय नियम उपनियमों की सरेआम उपेक्षा है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भी इस प्रकार के प्रदूषण को अनुचित बताया है। इस प्रकार इन समस्त बातों को ध्यान में रखकर इस प्रवृत्ति पर चिन्तन करना चाहिए।

बुराई किसी धर्म, सम्प्रदाय तक सीमित नहीं, बुराई तो बुराई है। यहां एक बात और इसी सन्दर्भ में जोड़ना चाहता हूं यह केवल अजान तक ही ध्वनि प्रदूषण नहीं है, देर रात तक अन्य धार्मिक कार्यक्रमों में, विवाह आदि के अवसर पर बड़े बड़े डी. जे., तेज आवाज में स्पीकर बजाना भी अनुचित है। इस पर भी नियन्त्रण होना चाहिए, डी. जे. की भारी भरकम आवाज हृदय रोग से पीड़ित व्यक्तियों को या किसी भी बीमारी से जूझ रहे व्यक्ति के लिए बहुत कष्टदायक होता है। ऐसे भजन, गीत, सूचनाएं मनोरंजन के स्थान पर कष्ट पहुंचाते हैं और पीड़ित व्यक्ति उनको कोसते हैं।

अजान का विरोध नहीं है, किन्तु अपनी विचारधारा के लिए दूसरों को प्रताड़ित नहीं करना चाहिए। कम से कम सुबह की अजान का समय व ध्वनि पर नियन्त्रण करना नितान्त आवश्यक है। इस प्रकार एक ही देश में सिक्के के दोनों पहलु पर अपनी ही जीत वाली स्थिति ठीक नहीं है। एक ओर दूसरी विचारधारा को तो हम नहीं मानेगें, किन्तु हमारी विचारधारा को हम जबरन दूसरों पर थोपें यह कितना अव्यवहारिक व तथ्यहीन व्यवहार है। गाय को हिन्दू समाज पूज्य मानता है किन्तु अन्य मजहबी विचारधाराएं हिन्दुओं की इस पवित्र भावना की सरासर उपेक्षा कर रही है क्या एक राष्ट्र में ऐसा व्यवहार उचित है ? अजान कितनी भी जोर से देवें या धीमी आवाज में करें क्या अन्तर पड़ता है ? किन्तु अपनी हठधर्मी, दिखावे से उसे महत्व देना एक साम्प्रदायिकता का प्रतीक है। एक अच्छे व्यक्ति, अच्छे समाज और अच्छे राष्ट्र की कल्पना का आधार धर्म है, साम्प्रदायिकता नहीं।

सच्ची बात पक्की बात

यदि किसी बच्चे को उपहार न दिया जाये तो वह कुछ समय के लिए ही रोएगा।
मगर संस्कार न दिए जाएं तो वह जीवन भर रोएगा।

महर्षि दयानन्द ने बताया –

0 कोई कितना ही करे, जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत–मतान्तर के आग्रहरहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर माता–पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ भी विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं है।

– सत्यार्थ प्रकाश, अष्टमसमुल्लास

0 जो पूर्ण विद्वान, परोपकारी, जितेन्द्रिय, धार्मिक, सत्यवादी, छल–कपटरहित, नित्य भ्रमण करने वाले मनुष्य होते हैं, उनको **"अतिथि"** कहते हैं।

0 जब मनुष्य धार्मिक होता है तब उसका विश्वास और मान्य शत्रु भी करते हैं और जब अधर्मी होता है तब उसका विश्वास और मान्य मित्र भी नहीं करते।

– व्यवहारभानुः

0 परस्पर मिलते समय सत्कार करना हो तब **"नमस्ते"** इस वाक्य का उच्चारण करके छोटे, बड़ों, बड़े छोटों, नींच उत्तमों, उत्तम नींचों और क्षत्रियादि ब्राह्मणों वा ब्रह्मादि क्षत्रियों का निरन्तर सत्कार करें। **– यजु. 16/32**

0 जितने विद्याभ्यास, सुविचार, ईश्वरोपासना, धर्मानुष्ठान सत्य का संग, ब्रह्मचर्य, जितेन्द्रियतादि उत्तम कर्म हैं, वे सब तीर्थ कहाते हैं, क्योंकि इनके द्वारा जीव दुःख सागर से तर सकते हैं। **– आर्योद्देश्यरत्नमाला**

0 पत्थर में पत्थर, रोटी में रोटी की भावना करना यथार्थ ज्ञान कहाता है, अर्थात् जैसे को वैसा जानना **"भावना"** है। रोटी में पत्थर और पत्थर में रोटी की भावना करना मिथ्या ज्ञान, अन्य में अन्य बुद्धि, भ्रमरूप **"अभावना"** कहाती है।

– वेदविरूद्धमतखण्डन

0 ब्रह्माण्ड में जितने उत्तम पदार्थ हैं, उनकी प्राप्ति से जितना सुख होता है, सो सुख विद्या–प्राप्ति होने के सुख के हजारवें अंश के भी समतुल्य नहीं हो सकता।

– ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदोत्पत्तिविषयः

क्रमशः...........

व्यक्तित्व विकास

5. समायोजन शक्ति (Power to adjust)

अच्छे व्यक्तित्व का धनी पुरूष आन्तरिक जीवन तथा बाह्य वातावरण के साथ अपने को समायोजित या तालमेल बिठाने की शक्ति रखता है। उसमें समयानुसार विनम्र होना, दृढ़ संकल्प से परिस्थितियों का मुकाबला करने की क्षमता होती हैं वह बेंत की भांति नम्र और चट्टान के समान दृढ़ भी होता है। **(वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि)** की लोकोक्ति उसके जीवन में चरितार्थ होती है।

6. सामाजिकता (Sociability)

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज से भिन्न मानव की कल्पना आज के युग में नहीं की जा सकती। प्रत्येक कार्य में उसे दूसरे लोगों का सहयोग लेना ही पड़ता है। समाज के बिना व्यक्तित्व का विकास सम्भव नहीं है। जब हमें समाज में ही रहना है तो सामाजिक मान्यताओं, परम्पराओं, मूल्यों, धारणाओं तथा रीति–रिवाजों का पालन एवं समाज के दूसरे सदस्यों के साथ मिलकर चलना चाहिए। जैसा देश वैसा भेष। अच्छ व्यक्तित्व वाले व्यक्ति परिवर्तित वातावरण के साथ शीघ्र ही अपने को समायोजित कर लेते हैं।

7. सन्तोष (Satisfaction)

अच्छे व्यक्तित्व का सन्तोष विशेष गुण है। पूर्ण पुरूषार्थ करने पर जो कुछ प्राप्त हो उसी में प्रसन्न रहना और आगे के लिए पुरूषार्थ करना सन्तोष कहलाता है। पुरूषार्थ न करने का नाम सन्तोष नहीं हैं सन्तोषी सदा सुखी। कहा भी है –

गोधन गजधन वाजिधन और रतन धन खान।
जब आवे सन्तोष धन सब धन धूलि समान।।

8. महत्वाकांक्षा (Ambition)

हर पल आगे बढ़ने की आकांक्षा का होना। व्यक्ति जैसा सोचता है वैसा करता है। जिसका चिन्तन ही निराशाजनक है वह जीवन पथ पर आगे नहीं बढ़ सकता।

9. जीवन का उद्देश्य (Perposiousness)

सुनिश्चित उद्देश्य व्यक्ति के प्रत्येक कार्य तथा व्यवहार को एक निश्चित दिशा प्रदान करता है। व्यक्ति के जीवन का लक्ष्य बन जाने पर उसकी समस्त कियाएँ एवं चिन्तन केन्द्रित हो जाता है। जैसे सूर्य की किरणें उत्तल लैंस द्वारा एक

केन्द्र बिन्दु पर एकत्रित होकर उस स्थान पर रखी वस्तु को जला देती है। जीवन में उद्देश्य के बिना परिश्रम निष्फल होता है। अपने लक्ष्य को सामर्थ्य से कुछ बड़ा बनाएँ। यदि हम चॉद नहीं बन सके तो सितारे तो बन ही जाएँगे। जीवन का लक्ष्य बनाकर उसे सायंकाल तथा प्रातःकाल दोहराना चाहिए। परन्तु स्मरण रहे मनुष्य जीवन का लक्ष्य–धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति करना ही है।

व्यक्तित्व विकास के उपाय..

1. उत्तरदायित्व को वहन करना :

जब व्यक्ति किसी कार्य को करने की जिम्मेदारी लेता है तो समझो उसकी उन्नति का मार्ग प्रशस्त हो गया। जो लोग स्वयं जिम्मेदारी या उत्तरदायित्व लेने में आनाकानी करते हैं वे केवल दूसरों को दोष देने तक ही सीमित रह जाते हैं। जिम्मेदारी और स्वतन्त्रता हाथ में हाथ डाले चलती है। किसी समाज का पतन चोर उचक्कों से इतना नहीं होता जितना अच्छे लोगों द्वारा दायित्व न लेकर निठल्ले बैठे रहने से होता है। जब अच्छे लोग निष्क्रिय होकर बैठ जाएँ तो बुराई को पनपने का अवसर मिल जाता है।

2. दूसरों की बातों को ध्यान से सुनना :

यदि आप चाहते हैं कि दूसरे लोग आपकी बात को ध्यान से सुने तो आपको भी दूसरों की बातों को ध्यान से सुनना चाहिए, इससे दूसरा व्यक्ति अपने आपको महत्वपूर्ण समझने लगता है और फिर वह आपकी बात को भी ध्यान से सुनता है। अच्छा श्रोता बनने के लिए दूसरे व्यक्तियों को उनकी बात कहने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। उनसे प्रश्न पूछें। बीच में बाधा न डालें। कहने वाले के अभिप्राय को समझने का प्रयत्न करें।

3. उत्साह :

उत्साह के बिना कोई बड़ा काम पूरा नहीं होता। उत्साह और सफलता साथ साथ चलते हैं। उत्साह से आत्मविश्वास बढ़ता है। जिन्दगी जिन्दादिली का नाम है। उत्साह और किसी कार्य को करने की इच्छा व्यक्ति को सफलता के चरम शिखर पर ले जाती है। उत्साह से आत्मबल बढ़ता है। उत्साह एक प्रकार की आदत है जिसे उत्साही पुरूषों के संग से सीखा जा सकता है।

4. प्रतिज्ञा पूरी करना :

जैसी हानि प्रतिज्ञा भंग करने वाली की होती है वैसी दूसरों की नहीं। जिससे जैसी प्रतिज्ञा की हो उसे पूरा करने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए। प्राण जाए पर

वचन न जाई। कार्य वा साधयेयं देहं वा पातयेयम्। किसी काम को पूरा करने की प्रतिज्ञा कर लेने पर हर स्थिति में उसे पूरा करना सुदृढ़ व्यक्तित्व की पहचान है। अपने वचन को निभाने वाले का सब विश्वास करते हैं।

5. कृतज्ञ होना :

किए हुए उपकार को मानना, उपकार करने वाले को धन्यवाद देना तथा समय आने पर उसका प्रत्युपकार करना कृतज्ञता और उपकार को भुला देना कृतघ्नता है, जिसका शास्त्रकारों ने कोई प्रायश्चित नहीं लिखा। कृतज्ञता व्यक्तित्व को निखारती है। हमारे माता–पिता ने अनेक कष्ट सहन कर हमारा पालन पोषण किया है तो हमारा भी यह कर्तव्य है कि वृद्धावस्था में उनकी हर संभव सहायता कर उन्हें सुखी रखें।

परन्तु किसी पर उपकार करने के पश्चात प्रत्युपकार की भावना नहीं रखनी चाहिए कि हमने अमुक व्यक्ति की इस कार्य में सहायता की, इसलिए वह भी हमारा सहयोग करे। जो व्यक्ति उपकार करके उसका मूल्य प्रत्युपकार में चाहता है वह साधु नहीं है जो अनुपकार करने वालों के साथ भी उपकार करता है वही साधु या सज्जन कहलाने योग्य है।

6. विश्वास पात्र बनना :

परस्पर का व्यवहार विश्वास के द्वारा ही होता है। योग्यता के साथ किसी का विश्वास पात्र बनना भी आवश्यक है। बिना विश्वासपात्र बने कोई भी जिम्मेदारी नहीं दी जा सकती। किसी से अच्छे संबंध बन जाने पर कष्ट सहकर भी उन्हें बनाए रखना चाहिए।

7. विनम्र बनना :

विनम्रता सब गुणों का आधार है। सादगी और विनम्रता महान बनने के दो गुण है। विनम्रता के बिना आत्मविश्वास केवल अहंकार ही है। सच्ची विनम्रता लोगों को आपकी ओर आकर्षित करती है। विनम्रता से अभिप्राय है दूसरों का भी ध्यान रखना और अहंकार को त्यागना। विनम्र व्यक्ति कम पढ़ा–लिखा होने पर भी जीवन पथ में आगे बढ़ता चला जाता है। शिष्टाचार का अभ्यास घर से ही प्रारंभ करना चाहिए। बहुत से प्रतिभाशाली और कार्य में कुशल व्यक्ति विनम्रता और शिष्टाचार की न्यूनता के कारण अपने जीवन में सफलता प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं। अभिमानी का सिर नीचा होता है। अपने मार्ग में स्थित बड़ी चट्टान, वृक्ष, भवनादि को नदियाँ धराशायी कर देती है परन्तु उनके किनारों पर उगे बेंत के झाड़ को कुछ भी नहीं कहती क्योंकि उनमें पूर आने पर अन्य पदार्थ सीना ताने खड़े रहते हैं।

क्रमशः................

बोधकथा –

इन्द्रियों को वश में रखने की विधि

स्वामी रामतीर्थ जब प्रोफेसर तीर्थराम थे, तब लाहौर के एक कॉलेज में पढ़ाते थे। वह रहते थे लुहारी दरवाजा में। कॉलेज से घर को आ रहे थे, तो लुहारी दरवाजे में उन्होंने एक व्यक्ति को टोकरी में रखकर नींबू बेचते हुए देखा। पीले रंग के रसभरे नींबू थे। मुख में पानी आ गया। जिव्हा ने कहा – क्रय कर लो, उनका स्वाद बहुत उत्तम है।

तीर्थराम थोड़ी देर रूके। फिर आगे बढ़ गये। आगे जाकर जिव्हा फिर मचली, उसने कहा – नींबू अच्छे तो थे, नींबू खाने में हानि क्या है ?

तीर्थराम उल्टे आये। नींबुओं को देखा। वास्तव में बहुत उत्तम थे। उन्हें देखकर फिर घर की ओर चल पड़े। थोड़ी दूर गये तो जिव्हा फिर चिल्ला उठी – नींबू का रस तो बहुत अच्छा है। नींबू तो खाने की चीज है। उसे खाने में पाप क्या है ?

तीर्थराम पुनः नींबूवाले के पास आ गये। दो नींबू मोल ले लिये। घर पहुंचे। देवी से कहा – चाकू लाओ। उसने चाकू लाकर रख दिया। तीर्थराम चाकू को नींबू के पास और दोनों को अपने समक्ष रखकर बैठ गये। बैठे रहे, देखते रहे। अन्दर से आवाज आई, इन्हें काटो, काटने में क्या हानि है ?

रामतीर्थ ने चाकू उठाया और एक नींबू को काट दिया। मुख में पानी भर आया। अन्दर से फिर प्रेरणा हुई, इसे चखकर तो देखो, इसका रस बहुत उत्तम है।

रामतीर्थ ने एक टुकड़े को उठा लिया, जिव्हा के समीप ले गये। नींबू को उसके साथ लगने नहीं दिया। अन्दर से किसी ने पुकारकर कहा – तू क्या इस जिव्हा का दास है ? जो यह जिव्हा कहेगी, वही करेगा ? जिव्हा तेरी है, तू जिव्हा का नहीं।

समीप खड़ी पत्नि ने कहा – यह क्या करते हो ? नींबू को लाये, इसे काटा, अब खाते क्यों नहीं ?

जिव्हा ने कहा – शीघ्रता करो। नींबू का स्वाद बहुत उत्तम है। रामतीर्थ शीघ्रता से उठे। कटे और बिना कटे हुए दोनों नींबुओं को उठाकर गली में फैंक दिया और प्रसन्नता से नाच बैठे – मैं जीत गया।

यह है इन्द्रियों को वश में करने की विधि।

वेद वाणी

पाप से दूर हों

ओ3म् परोपे हि मनस्पाप किसशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वा कामये वृक्षां वनानि संचर गृहेषु गोषु में मनः।।

– अर्थवेद

हे (मनस्पाप) मन के पाप तू (परा उप एहि) दूर भाग जा हे पापी मन। (किम्) क्यो (अषस्तानि) निन्दित बातों को (षंससि) सोचता है। (परेहि) हट जा। हे मन के पाप (त्वा) तुझको (न कामये) मै नहीं चाहता। (वृक्षान्+वनानि) वृक्षों और वनों में अर्थात निर्जन स्थानों में (संचर) विचरो (में) मेरा (मनः) मन तो (गृहेषुं) मेरे शरीर रूप घर की सफाई में विकारों से दूर करने में (गोषु) इन्द्रियों को सही दिषा की ओर उन्मुख करने में तथा वेद पठन पाठन में गौ संरक्षक व गौ संवर्द्धन में लगा है।

भावार्थ – मन मानव जीवन का आधार है, योगीराज श्रीकृष्ण कहते हैं – **"मन एव मनुस्याणां कारणं बन्ध मोक्षयो"** मन ही मनुष्य के बन्धन का कारण है, मन ही मनुष्य के लिए मोक्ष का कारण है। मन का कपि बन्दर कहा गया है बहुत उछल कूद मचाता है मन के संकल्प विकल्प होते रहते है – इसमें उलझकर मनुष्य आकुल व्याकुल हो जाता है मन के विकार काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, मत्सर, के वषीभूत होकर मनुष्य शनैः शनैः पतन के गर्त में जाने लगता है मन एक सीढी है जिससे ऊपर भी जा सकते है और उपर से नीचे भी आ सकते है। किन्तु साधना में रत साधक मन के पापों को कठोर शब्दों में कहता है।

मेरा तुझसे अब कोई सम्बन्ध नहीं है मैं तुझे नहीं चाहता। मैं अब समझ गया हूं – ये मन के विकार नरक के पथ है। मै तो अब दृढ संकल्प के साथ प्रभू का स्मरण करते हुए संयम विवेक की पतवारों से जीवन नौका खे रहा हॅू – योगासन प्राणायमादि से जीवन को प्रेय मार्ग से श्रेय मार्ग की ओर ले जा रहा हॅू। मै तो अपने शरीर की अर्न्तमन की सफाई में लगा हुआ हॅू। मै गौ अर्थात इन्द्रियों को सात्वीक और बलषाली बना रहा हॅू – वेदवाणी का जीवन में पठन पाठन और उसे जीवन में उतार रहा हॅू। गौ सर्वर्द्धन और गौ संरक्षण में जीवन आर्पित किए हुए हॅू। मन से बुरे विचारों को दूर कर रहा हॅू। हे मन के पाप भाग जा दूर हो जा। इस प्रकार की दृढ़ता आने से मन के द्वारा मोक्ष की प्राप्ति हो और बन्धनों से मुक्ति हो सकती है।

श्री राजेन्द्र व्यास
उज्जैन

ये किसकी नजर लग गई मेरे वतन को...........

थी अमन चैन की जिन्दगी, नहीं यहां दूरियॉ थीं,
मिलजुलकर रहने की और अदब की खूबियॉ थीं।
निभाते थे लोग सदा दिए हुए वचन को,
ये किसकी नजर लग गई मेरे वतन को।........

विश्वास और सहयोग, रिश्तों का आधार था,
नहीं इतना फैला अत्याचार या भ्रष्टाचार था।
हर शख्स के मन में दूसरों के लिए प्यार था,
मिल जुलकर संभालते थे देश के चमन को।
ये किसकी नजर लग गई मेरे वतन को.....................

धर्म के नाम पर पाखण्ड नहीं फैला था,
दिल दिमाकों पर एक ईश्वर ही अकेला था।
साधु–सन्तों का भी नहीं कोई झमेला था,
जीवन में धारण किया था सभी ने धरम को।
ये किसकी नजर लग गई मेरे वतन को........................

नहीं थी हैवानियत न हिंसा का ताण्डव था,
सही मायने में तब ये मानव, मानव था।
स्वार्थ में ये लिप्त साम्प्रदायिक विचारों ने, उजाड़ दिया चमन को।
ये किसकी नजर लग गई मेरे वतन को......................

रिश्तों की मिठास, आपस का विश्वास
धीरे–धीरे मिटता जा रहा।
कहॉ जाकर रूकेगा पतन, समझ न ये आ रहा,
दूषित कर रहे जो सारे जहां व गगन को,
पर देखना ऐसे शैतान तरस जायेगें कफन को
ये किसकी नजर लग गई मेरे वतन को.....................

थी सनातन संस्कृति, सबको सुहाती थी,
सर्वे भवन्तु का सन्देश सबको सुनाती थी,
धर्म का मर्म समझ सद्‌विचार फैला था,
समाज में रहता कोई नहीं अकेला था,
करते थे नित्य संध्या और हवन को।।

ये किसकी नजर लग गई मेरे वतन को.......................

अभी भी वक्त है, ऐ हिस्दुस्तॉं वालों संभल जाओ,
अपनी मानवीयता पर और कलंक न लगाओ।
भाई चारे और विश्वास की रीति चला दो,
दिलों से बैर भाव, ऊँच नींच के भेद हटा दो।
फिर से लहरा दो इस उजड़े चमन को,
ये किसकी नजर लग गई मेरे वतन को.......................

— प्रकाश आर्य, महू

सनातन धर्म के महान् नायक योगीराज कृष्ण ने अर्जुन को इसी एक ईष्वर का नाम स्मरण करने का उपदेष देते हुए कहा —

''ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्।''

एक ओ३म् परमात्मा के नाम का स्मरण करो।

— गीता 8/13

वह एक ओम परमात्मा ब्रह्म है उसे इसी नाम से स्मरण करो।

इसलिए हमें उस परमात्मा के मुख्य नाम ओ3म् का स्मरण करना चाहिए उसमें परमात्मा के सभी नामों का स्मरण स्वतः हो जाता है। यही ध्यान लगाने का सर्वोत्तम शब्द है। माण्डूक्योपनिषद् में भी ईष्वर का मुख्य नाम ओ3म् बताया है **''ओमित्येतदक्षरमिदं''** और कहा है **''एष सर्वेस्य भूतानाम् योनिः''** अक्षरयोंकारो वही परमात्मा सब प्राणियों के उत्पत्ति और विनाष का कारण है अर्थात् सब कुछ उसी में समाहित है।

वो सुबह कभी तो आयेगी

आकश में सूरज चमकेगा,
जब धरती मंगल गायेगी।
जब रिमझीम सावन बरसेगा,
खेतों में बहारें आयेगी।
....वो सुबह कभी तो
जब पंछी डाल पर चहकेगें,
और कोयल गान सुनायेगी,
कलियों पर भंवरे गुजेंगे,
फूलों पर रंगत छायेगी।
....वो सुबह कभी तो
जब लाल पलास रंगायेगा,
और सरसों पीली फूलेगी।
जब सर्द हवाए गुम होगी
तब ऋतु बसन्त लहरायेगी।
....वो सुबह कभी तो
जब आतंक की ऑंधी बन्द होकर,
खुशहाली प्यार बढ़ायेगी।
कश्मीर की वादी में फिर से,
जब बुलबुल गीत सुनायेगी।
....वो सुबह कभी तो
औषध हिमगिरि पर महकेगा,
निर्मल गंगा मुस्कुरायेगी।
परदेस में भूले मुसाफिर को,
जब याद वतन की आयेगी।
....वो सुबह कभी तो
जब वेद ऋचाओं की स्वर लहरी
विश्व पटल पर छायेगी
जब विश्व गुरू होगा भारत
मॉ भारती तब हर्षायेगी
....वो सुबह कभी तो

– **राधेश्याम गोयल "श्याम"**
कोदरिया, महू

वेद ही सब सत्य विद्याओं के भण्डार क्यों ?

आइयें विचार करते हैं। आर्य समाज के संस्थापक, मानव समाज के उद्धारक, योगीराज महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने जीवन में वैदिक – अवैदिक लगभग 3500 ग्रन्थों का सूक्ष्म अध्ययन एवं गहन अनुसन्धान करने के पश्चात् यह घोषणा की थी, कि वेद ही सब सत्य विद्याओं के, ज्ञान विज्ञान के भण्डार हैं, निधि,हैं। वेद के अनुकूल चलकर ही मानव का कल्याण संभव है तभी राष्ट्र की उन्नति हो सकती है। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर आर्य समाज द्वारा देश में अनेकों गुरूकुल विद्यालय संचालित किये जा रहे हैं। जिनके माध्यम से बालक बालिकाओं का चरित्र निर्माण, सनातन धर्म एवं संस्कृति की रक्षा की जा रही है।

वर्तमान समय में प्रमाद व भ्रम के कारण एक भूल हो रही है जिसे सुधारना अति आवश्यक है। हमने केवल संस्कृत भाषा को ही सीखने को वैदिक शिक्षा मान लिया है। आज हम संस्कृत भाषा मात्र सीखकर अथवा गीत गाना व बोलना सीखकर ही अपने आपको वेदों का विद्वान घोषित कर देते हैं। अपने नाम से बड़े–बड़े विज्ञापन प्रकाशित करवा कर,स्वयं को सर्वश्रेष्ठ मानकर इसी में सन्तोष कर लेते है, अपने आप को कृत–कृत्य मान लेते हैं। इसी बात को मुण्डकोपनिषद् में बड़े स्पष्ट शब्दों में बताया है।–

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितम्मन्यमानाः।
जङ्घन्यमानाः परियन्ति मूढ़ा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः।।

अर्थ–अविद्या के अन्धकार में पड़े हुए अपने आप को धीर विद्वान पण्डित समझने वाले आलसी पाप प्रवृत्ति के कारण दुःखों के मारे मूर्ख पुरूष, जैसे अन्धे के पीछे अन्धे चलते हैं वैसे भटकते रहते हैं। ऐसे व्यक्ति जो वेद ज्ञान से शून्य हैं तथा वेद से विपरीत चलकर कुछ भी लाभ नहीं ले पाते।

आर्य जाति के महान दार्शनिक, वेदों के वैज्ञानिक भाष्य कर्त्ता महर्षि दयानन्द सरस्वती लिखते हैं वेदों में अंक गणित, बीज गणित, रेखा गणित, ज्योतिष है इसमें यजुर्वेद का अ0 18, मं0 ,24,25 उद्धृत करते हैं।'' इसे भी हमने वैदिक विधि से पढ़ना पढ़ाना छोड़ दिया है।

बर्तमान में वैदिक ज्योतिष गणित के विद्वान आचार्य दार्शनेय श्री लोकेश जी हैं जो नोएडा से वैदिक पंचाग प्रकाशित करते हैं अद्भुत पंचाग है अवश्य पढ़ें। दूसरे स्वामी ब्रह्मानन्द हैं। वेदों में विमान विद्या है महर्षि भारद्वाज रचित वृहद विमान शास्त्र जिसका कुछ भाग इन्टरनेट पर भी उपलब्ध है राइट ब्रदर्स जिन्हें हम जानकारी न होने के कारण विमान विद्या का जनक मानते हैं, से 8 वर्ष पूर्व आर्य वैदिक वैज्ञानिक श्री शिवकर बापू तलपदे ने वेद विज्ञान के अनुसार सन् 1895 में मुम्बई की चौपटी पर विमान का अविष्कार कर दिखाया था। मरूतसखा नामन यह विमान 1500 फुट की ऊंचाई पर 17 मिनट तक उड़ता रहा था, महाराजा गायकवाड़ इसके साक्षी थे। अंग्रेजों ने छल करके श्री तलपदे जी से विमान का सूत्र (फार्मूला) ले लिया और स्वयं विमान के जनक बन गये। इसे भी इन्टरनेट पर देख सकते हैं। हमें पुनः वेद विज्ञान पर अनुसन्धान की आवश्यकता है। वेदों में

सृष्टि विद्या, ब्रह्म विद्या, तार विद्या, आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्र पृथिवी आदि लोक लोकान्तर भ्रमण, आकर्षण, राजनीति आदि अनन्त विद्यायें वेदों में हैं। हमें फिर से गुरूकुलों में अनुसन्धान केन्द्रों की स्थापना करके वैदिक विद्याओं के प्रचार–प्रसार की आवश्यकता है। वैदिक विद्याओं के सम्बन्ध में "नारद और सनत्कुमार संवाद" के रूप में छान्दोग्य उपनिषद् में आख्यायिका है एक बार नारद जी सनत्कुमार के पास आत्म ज्ञान प्राप्त करने के लिए गये। नारद जी ने सनत्कुमार ने पूछा आपने अब तक जो कुछ पढ़ा है वह सब मुझे बताईये। तब नारद बोले –

सहो वाच ऋग्वेदं भगवो——सर्पदेवजनविद्यामेतद् भगवोऽध्येमि। छा० 7/1/2

अर्थ–"भगवान मैने चारो वेद शल्यक्रिया एवं अंगों के प्रत्यारोपण आदि पुराण (ब्राह्मण ग्रन्थ) पित्र्यविद्या–अर्थात् शुश्रशाविज्ञान (नर्सिंग) अर्थ शास्त्र, ईश्वर प्राप्ति विज्ञान, भूतविद्या–प्राणी शास्त्र (बायोलॉजी) सर्पविद्या (विषैले प्राणियों की विद्या) राशि–गणित, आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान, उत्पात विज्ञान, भूचाल आदि तर्क शास्त्र, नीति शास्त्र, निरूक्त, धनुर्विद्या, नक्षत्र विद्या–ज्योतिष नृत्यगीत वाद्य शास्त्र इन सबको पढ़ा है किन्तु मैं आत्मा को नहीं जानता।"

आज समाज में एक भ्रम फैला है कि अंग्रेजी भाषा पढ़े बिना केवल वेद पढकर अच्छे डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक नहीं बन सकते। किन्तु ध्यान रहे वेदों को पढ़कर ही समाज सेवी, चरित्रवान, डॉक्टर वैज्ञानिक, इंजीनियरों का निर्माण संभव है। हम भारतीय लोग आज वेदों से दूर भाग रहे हैं और विदेशी भाषा आदि का अनुकरण करके अपने आप को गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं। जबकि विश्व में विकसित माने जाने वाले सभी देश विज्ञान पर और संस्कत भाषा पर अनुसन्धान कर रहे हैं। आप इन्टरनेट पर "नासा ऑन संस्कत" डाल कर देख सकते हैं। वैदिक गणित के सूत्र इतने सरल हैं जिनके माध्यम से आसानी से गणित के प्रश्नों को हल किया जा सकता है।

1–उदाहरण के लिए आपके सामने एक सूत्र प्रस्तुत करता हूँ वैदिक गणित का सूत्र है– " **एकाधिकेन पूर्वेण** " पूर्व से एक अधिक के द्वारा अर्थात् कोई भी संख्या जिसका इकाई का अंक पाँच हो पहले अंक से एक अधिक के द्वारा वर्ग ज्ञात करें –

जैसे– 85, 8 दहाई 5 इकाई आठ से एक अधिक नौ, नौ और आठ की गुणा = 72 पाँच गुणा पाँच = 25 =7225 यह पचासी का वर्ग है।

2– उदाहरण – 25, 9 गुणा 10=90, 5 गुणा 5=25 यह पिचानवे का वर्ग है।

इस तरह हम वैदिक विधि से प्रत्येक क्षेत्र में हानि रहित सफलता प्राप्त कर सकते हैं। सभी से निवेदन है कि पूर्वाग्रह और आलस्य त्यागकर वेदों की ओर लौटें। यह वैदिक संस्कति ही सनातन संसकति है। भगवान श्री राम और भगवान श्री कृष्ण, हनुमान, गौतम, कणाद आदि सब इस वैदिक संस्कृति के ही समर्थक थे। **"महाजनोयेन गतः स पन्था"** जिस रास्ते पर हमारे महापुरूष चलें हो हमें भी उसी का अनुसरण करना चाहिए वेद ही सनातन धर्म के मूल हैं। इसी में सबकी उन्नति तथा सबका सुख है यही महर्षि दयानन्द और आर्य समाज का सन्देश है।

पं. सुरेशचन्द्र शास्त्री
उपदेशक–म.भा.आ.प्र. सभा भोपाल (म० प्र०)

नारियों के अधिकार व कर्तव्य

यत ते नाम सुहवं सुप्रणीतेनुमते अनुमतं सुदानु।
तेना नो यज्ञं पिपहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरम्।।

इस मन्त्र में पत्नी को अनुमति शब्द से सम्बोधित किया है। अनुमति से अच्छा नाम शायद सुमति हो सकता है परविश्वारा है। यसह सत्य है नारी जहां जिस भी क्षेत्र में होगी वहां दुःख, कष्ट, घरेलु छोटी–बड़ी समस्याएं तो रहेगी ही नहीं। अतः वह सबके द्वारा वरणीय है।

एक संबोधन अभी और शेष है मन्त्र में कहा **सुभगे!** सुभगा है। तेरा भग सुखदायी है, तू सौभाग्यवती है। इसलिए मैं प्रार्थना करता हूं कि तू **सुवीरं रविं** – अच्छे वीर पराक्रम से युक्त पुत्र रूप धन का हमारे लिये **धेहि** – धारण कर, और उसका पोषण भी कर क्योंकि उत्तम सन्तान देकर अच्छो पालन पोषण के द्वारा सुसन्तान प्राप्ति की तू ही आधार है। वैदिक नारी अपने इस कर्तव्य का बोध अच्छी प्रकार करती थी, वह घर की व्यवस्था में गृह के संयोजन में तथा सन्तान के निर्माण में अपने अधिकार और दायित्व को समझती थी। इसीलिए वेद के शब्दों में वह अधिकारपूर्वक कहती थी।

अहं वदामि नेत् त्वं सभायामह त्वं वद।
ममेदसस्त्वं केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन।।

– अथर्व 9/39/4

इस घर के **अहं वदामि** – मैं बोलती हूं, मैं बोलूंगी **नेत् त्वं** – तू नहीं ! कभी नहीं। हॉ सभा में बाहर सोसायटी में तू बोल तुझे जितना बोलना हो। साथ ही वेद के शब्दों में वह आगे सचेत करते हुए कहते हैं – तू बाहर जा रहा है जा! लेकिन ध्यान रखना तू केवल मेरा ही है। बाहर किसी ओर की पराई स्त्री का कीर्तन भी मत करना, नाम भी मत लेना। इस प्रकार नारी तो स्वयं पतिव्रता होती ही है, उसे होना भी चाहिये पर पुरूष को भी छूट नहीं है, यह मन्त्र ने स्पष्ट कर दिया। पुरूष को भी एक पत्नीव्रत बनकर ही रहना है। किसी दूसरी स्त्री का नाम भी नहीं लेना है।

मन्त्र में नारी को सुभंगा शब्द से सम्बोधित किया है और समाज में विवाहित नारी को सौभाग्यवती भवः अखण्ड सौभाग्यवती भव का आशीर्वाद दिया जाता है। इसीलिये पति के मर जाने पर सुहाग के सौभाग्य` विवाहिता के जो चिन्ह हैं बिन्दी, सिन्दूर और अन्य श्रृंगार आदि उनसे सदा के लिए उसे वंचित कर दिया जाता है। मानो पति ही उसका सौभाग्य था।

इस प्रकार नारी के लिये पत्नी के लिये प्रयुक्त अनुमति सुप्रणीति विश्वारा है। यह सत्य है नारी जहां जिस भी क्षेत्र में होगी वहां दुःख, कष्ट, घरेलु छोटी–बड़ी समस्याएं तो रहेगी ही नहीं। अतः वह सबके द्वारा वरणीय है।

एक संबोधन अभी और शेष है मन्त्र में कहा **सुभगे!** सुभगा है। तेरा भग सुखदायी है, तू सौभाग्यवती है। इसलिए मैं प्रार्थना करता हूं कि तू **सुवीरं रविं** – अच्छे वीर पराक्रम से युक्त पुत्र रूप धन का हमारे लिये **धेहि** – धारण कर, और उसका पोषण भी कर क्योंकि उत्तम सन्तान देकर अच्छो पालन पोषण के द्वारा सुसन्तान प्राप्ति की तू ही आधार है। वैदिक नारी अपने इस कर्तव्य का बोध अच्छी प्रकार करती थी, वह घर की व्यवस्था में गृह के संयोजन में तथा सन्तान के निर्माण में अपने अधिकार और दायित्व को समझती थी। इसीलिए वेद के शब्दों में वह अधिकारपूर्वक कहती थी।

अहं वदामि नेत् त्वं सभायामह त्वं वद।
ममेदसस्त्वं केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन।।

– अथर्व 9/39/4

इस घर के **अहं वदामि** – मैं बोलती हूं, मैं बोलूंगी **नेत् त्वं** – तू नहीं ! कभी नहीं। हॉ सभा में बाहर सोसायटी में तू बोल तुझे जितना बोलना हो। साथ ही वेद के शब्दों में वह आगे सचेत करते हुए कहते हैं – तू बाहर जा रहा है जा! लेकिन ध्यान रखना तू केवल मेरा ही है। बाहर किसी ओर की पराई स्त्री का कीर्तन भी मत करना, नाम भी मत लेना। इस प्रकार नारी तो स्वयं पतिव्रता होती ही है, उसे होना भी चाहिये पर पुरूष को भी छूट नहीं है, यह मन्त्र ने स्पष्ट कर दिया। पुरूष को भी एक पत्नीव्रत बनकर ही रहना है। किसी दूसरी स्त्री का नाम भी नहीं लेना है।

मन्त्र में नारी को सुभंगा शब्द से सम्बोधित किया है और समाज में विवाहित नारी को सौभाग्यवती भवः अखण्ड सौभाग्यवती भव का आशीर्वाद दिया जाता है। इसीलिये पति के मर जाने पर सुहाग के सौभाग्य` विवाहिता के जो चिन्ह हैं बिन्दी, सिन्दूर और अन्य श्रृंगार आदि उनसे सदा के लिए उसे वंचित कर दिया जाता है। मानो पति ही उसका सौभाग्य था।

इस प्रकार नारी के लिये पत्नी के लिये प्रयुक्त अनुमति सुप्रणीति विश्ववारा और सुभगा ये विशेषण वेदों में नारी कर्तव्य व अधिकार के व्यापक हैं। यज्ञ को पूर्ण करना व उसका पालन करने का दायित्व नारी पर है। यदि पुरूष समाज अपने अतिरिक्त बल के प्रयोग से इस वेदाज्ञा का उल्लंघन कर नारी के अधिकारों पर प्रहार करेगा तो समाज में अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार के साथ दुर्भिक्ष अकालमृत्यु और भय से युक्त दुर्दिन ही उसका परिणाम होगा। यह सुनिश्चित है। क्योंकि शास्त्रों में कहा गया है –

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्य पूजा व्यक्तिकमः।
त्रीणि तत्र प्रवर्तन्ते दुर्भिक्षं मरणं भयम्।।

– आचार्या नन्दिता जी शास्त्री

उन्नति के लिये आवश्यक चिन्तन

आत्मानं खलु उन्नेतुं, चतुर्ध चिन्तनं मतम्।

लक्ष्यः पन्थाश्च शैली च, साधनं कीदृशं मम।। 2।।

भावार्थ – हम मनुष्यों को आवश्यक है कि – व्यक्तिगत उन्नति के लिये, पारिवारिक उन्नत के लिये, सामाजिक उन्नति के लिये या राष्ट्रीय उन्नति के लिये चार बातों पर आवश्यक ध्यान देवें –

(1) लक्ष्य : सर्वप्रथम हमारा लक्ष्य निर्धारित होना चाहिये, हम अपने लक्ष्य के प्रति आश्वस्त, दृढ़ तथा निःशंक होवें, हमारे जीवन में यदि हम मुख्य तथा गौण लक्ष्यों को बनाते हैं, तो हमारे सभी गौण कार्य भी मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक होने चाहिये। चलते–फिरते, उठते–बैठते हमें सदा अपने लक्ष्य को स्मरण रखना चाहिये। जैसे – मेरा लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति है, मेरा लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है, अथवा मुझे हताश, निराश तथा दुःखी नहीं होना है।

(2) पन्थाः (मार्ग) : हमें अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये उचित मार्ग का चयन करना चाहिये। मार्ग दो प्रकार के होते हैं – (1) श्रेयमार्ग (2) प्रेय मार्ग – हमें चिन्तन, मनन, निदिध्यासन करके निश्चित मार्ग का चयन करना चाहिये। ये दोनों मार्ग एक–दूसरे से विपरीत दिशा में जाने वाले होते हैं, अतः भिन्न–भिन्न लक्ष्यों तक पहेुचाते हैं। अनेक व्यक्ति इस प्रकार कहते हैं "मार्ग भिन्न भिन्न हैं किन्तु पहुंचाते एक ही जगह हैं" यह धारणा ठीक नहीं है। प्रथम श्रेयमार्ग, प्रेयमार्ग की अपेक्षा कष्टप्रद, तपस्या से युक्त, थोड़ा विलम्ब से फल देने वाला हो सकता है, क्रिन्तु कालान्तर में अतुलनीय सुख–शान्ति–निर्भयता, उत्साह एवं आनन्द आदि गुणों को देने वाला होता है। जो कि हमें ईश्वरप्रापक तथा मोक्ष प्राप्ति में सहायक होता है।

किन्तु प्रेयमार्ग, श्रेयमार्ग की अपेक्षा भोग विलास के तथा क्षणिक सुख को देनेवाला अधिक साधनों से युक्त होता है। प्रेयमार्ग में क्षणिक अस्थायी सुख प्राप्त होता है, जो कि अन्त में निराशा, हताशा, क्षीणता तथा व्याधियों को जन्म देता है। प्रेयमार्ग के अस्थायी सुख से पूर्ण तृप्ति, पूर्ण आनन्द नहीं मिलता अपितु भोगों को भोगने की इच्छा बढ़ती ही जाती है। प्रेयमार्ग में प्राप्त होने वाले अस्थायी सुख के लिये हिंसा असत्यव्यवहार, द्वेष, द्रोह, चोरी आदि दोषों के होने की संभावना अपेक्षाकृत ज्यादा होती है।

(3) शैली : लक्ष्य प्राप्ति में हमारे कार्यों की शैली (तरीका, रीति) का भी बहुत अधिक महत्व होता है। अनेकों बार देखा जाता है – व्यक्ति श्रेष्ठ लक्ष्य बनाता है, श्रेष्ठ मार्ग का चयन करता है, साधन भी अच्छे होते हैं – किन्तु कार्य करने की शैली ठीक न होने के कारण बार–बार असफल होता ही रहता है – अतः हमें चिन्तन–मनन करके, अपने से अधिक अनुभवी व्यक्ति को पूछकर – ऐसी शैली को अपनाना चाहिये जिसमें – न्यून से न्यून समय, साधन तथा बल का व्यय होकर लक्ष्य प्राप्ति होती हो।

(4) साधन : लक्ष्य प्राप्ति के लिये हमारे पास समुचित मात्रा में अच्छे से अच्छे साधन होने चाहिये।

श्रेयमार्ग में चलने के लिए आवश्यकतानुसार अन्य लौकिक साधन तथा आध्यात्मिक उन्नति के लिये यम–नियम का पूर्ण पालन, चिन्तन, मनन, निदिध्यासन, स्वाध्याय, साधन, विवेक, वैराग्य, मौन, एकान्त सेवन आदि को प्राप्त करना चाहिये।

प्रेयमार्ग में चलने के लिये – पर्याप्त धन–सम्पत्ति, भवन, यातायात के साधन, भूमि, भृत्य आदि।

हमें उन्नति के लिए उपरोक्त चारों बिन्दुओं पर चिन्तन करना चाहिये।

सत्यार्थ प्रकाश क्यों पढ़े ?

वैचारिक क्रान्ति के लिए।
राजधर्म को जानने के लिए।
आश्रम व्यवस्था को समझने के लिए।
वदिक धर्म की पुनः स्थापना के लिए।
सन्तानों को सुशिक्षित करने के लिए।
भारतीय संस्कृति को समझने के लिए।
धर्म के सत्य स्वरूप को जानने के लिए।
बन्धन और मोक्ष विषय को जानने के लिए।
गृहस्थाश्रम के नियमों को समझने के लिए।
ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानने के लिए।
युवकों में बढ़ती नास्तिकता को रोकने के लिए।
गुणकर्मानुसार वर्णव्यवस्था की स्थापना के लिए।
जगत की उत्पत्ति–स्थिति–प्रलय को समझने के लिए।
विश्व में एक ही मानवधर्म को विस्तृत करने के लिए।
अन्धविश्वास और पाखण्ड़ों को चुनौति देने के लिए।
ईश्वर जीव और प्रकृति के भेद को समझने के लिए।
धार्मिक, आथिक, सामाजिक और राजनैतिक क्रान्ति के लिए।
ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना–उपासना की उचित विधि को जानने के लिए।
भारतवर्ष तथा देशान्तरों में फैले मत–मतान्तरों में सत्यासत्य का निर्णय करने के लिए।

साभार – श्री मोहन कृति आर्ष तिथि पत्रक

कर्मफल सिद्धान्त

— पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

जीव कठपुतली नहीं

उत्तर — यह ठीक नहीं। आप थोड़ा सा अपने जीवन पर विचार कीजिये। क्या कभी आपके मन में किसी काम के करने की भावना उठती है ? क्या कभी आप के हृदय में यह प्रश्न उठता है कि मैं अमुक काम करूँ या न करूँ ? और क्या आप परिणामों पर विचार करके बुद्धि से तोल कर यह निश्चित नहीं करते कि मैं ऐसा करूँगा, ऐसा न करूँगा ? यदि ऐसा करते हैं तो सिद्ध है कि आप कर्म करने में स्वतन्त्र हैं। आप के समक्ष एक ही मार्ग नहीं अनेक मार्ग हैं और उनमें से निर्वाचन करके केवल एक ही मार्ग को ग्रहण करते हैं और शेष को छोड़ देते हैं।

प्रश्न — आप तो स्वतन्त्रता और परतन्त्रता दोनों से चिपटे हुए हैं या तो यह मानिये कि संसार की समस्त चीजें किसी नियन्ता के वश में हैं, उनके विरूद्ध पत्ता भी नहीं हिल सकता या यह मानिये कि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है। दो परस्पर विरोधी बातैं कैसे ठीक हो सकती हैं ?

उत्तर — जिनको आप परस्पर विरोधी बातें कहते हैं वह परस्पर विरोधी हैं नहीं। केवल समझ का फेर है। मित्रता और विरोध के अर्थों में भेद है। पीलापन और लाली परस्पर विरूद्ध नहीं परन्तु अंधेरा और उजाला परस्पर विरूद्ध हैं। जहां और जब उजाला होगा अंधेरा न होगा। इसी प्रकार जीव की स्वतन्त्रता की सीमा है और ईश्वर के नियन्त्रण की भी सीमा है। जरा सा विचार कीजिये। आप बोलते हैं, आपकी जीभ आपके आधीन है, आप उस जीभ से शुभ और अशुभ दोनों बोल सकते हैं। कभी आजमा लीजिये। ईश्वर का जीभ पर इतना नियन्त्रण है कि आप उससे स्वतन्त्रता पूर्वक काम ले सकें। जीभ पर आपका तो कोई नियन्त्रण नहीं। आपने उसे बनाया नहीं न आपके हाथ में है कि उस जीभ में कोई दोष आ सकें। फिर भी वह आपकी जीभ है। आप उसको अपनी इच्छा के अनुसार प्रयुक्त कर सकते है। इससे स्पष्ट है कि आप किसी सीमा तक ईश्वर के नियन्त्रण में हैं और किसी सीमा तक स्वतन्त्र हैं। यह स्वतन्त्र्य आपकी स्वयं अनुभूति है, आपकी कल्पना नहीं। एक उदाहरण लीजिये, एक नदी है। उस पर पुल बंधा हुआ है। उस पुल के दोनों तरफ आदमी के कद के बराबर ऊँची बाड़ लगी हुई है। आप चलने में स्वतन्त्र भी हैं और परतन्त्र भी। उन बाड़ों के बीच आप मजे से चल सकते हैं दौड़ सकते हैं परन्तु बाड़ों को पार नहीं कर सकते। जिसने पुल बनाया उसने आपको एक सीमा तक स्वतन्त्रता दी। उसके बाहर परतन्त्र कर दिया। यह सब आपकी भलाई को दृष्टि

में रख कर किया गया। इसी प्रकार नियन्ता ने भी सृष्टि की ऐसी व्यवस्था कर दी कि आपके स्वतन्त्र्य और परतन्त्र्य दोनों की सीमा बनी रहे। यह नियन्ता की बुद्धिमत्ता और कल्याण का सूचक है। आप सर्वथा परतन्त्र होते तो आपका विकास न होता। आपको अपनी बुद्धि के प्रयोग का कोई अवसर न मिलता ? **यदि आप सर्वथा स्वतन्त्र होते तो आप बुरा काम करके भी भला फल चाहते।** दूसरी बात यह है कि जीव एक नहीं है। सब को पूर्ण स्वतन्त्रता देना कल्पना मात्र है। एक की स्वतन्त्रता दूसरे की परतन्त्रता का कारण हो जाती है। **सड़क पर यदि सभी यात्री पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त कर लें और उसका प्रयोग करने लगें तो एक गाड़ी, दूसरी गाड़ी से टकरा जाये, अतः स्वतन्त्रता की सीमा भी होती है।**

एक और उदाहरण लीजिये। परीक्षार्थी परीक्षा में बैठा हुआ है। प्रश्न–पत्र और उत्तर पत्र उसके हाथ में है। वह स्वतन्त्र है कि किसी प्रश्न का जो चाहे उत्तर दे परन्तु दूसरे परीक्षार्थी से बात नहीं कर सकता, स्वतन्त्र भी और परतन्त्र भी। स्वतन्त्र्य और परतन्त्र्य की सीमाएं हैं। ये दोनों बातें परीक्षार्थी के हित को दृष्टि में रख कर नियत की गई हैं। परीक्षार्थी जो लिखेगा उसका फल सीमा के भीतर है। आप क्या कहेगें। परीक्षार्थी पूर्णतया स्वतन्त्र है या पूर्णतया परतन्त्र ? दोनों में से एक भी नहीं। जब जीव अनेक हैं तो वे पूर्णतया स्वतन्त्र नहीं हो सकते। हॉ केवल एक दशा में हो सकते हैं। अर्थात् जब उन जीवों का विकास इतना उच्चतम हो जाये कि वह तन्त्र या नियम को स्वयं समझाने लगें और उनका उल्लंघन करें ही नहीं। यदि सब परीक्षार्थी अत्यन्त विश्वासपात्र हो जाएं तो निरीक्षकों की आवश्यकता न पड़े। यदि सभी जीव पूर्ण ज्ञानी या मुक्त हो जाऐ तो किसी को किसी से डर न रहे। यदि सभी नागरिक पूर्ण शिक्षित और विचारशील हो जाएं तो सड़कों की मोड़ों पर पुलिस के पहरे की आवश्यकता न हो। फिर तो सृष्टि की ही आवश्यकता न पड़े परन्तु जिस सृष्टि की हम विवेचना कर रहे हैं, उसमें अल्पज्ञ जीव हैं जो विकास के भिन्न–भिन्न स्तरों पर हैं, अतः उनकी स्वतत्रता और परतन्त्रता की भी सीमाएं हैं और वे सीमाएं कर्मवाद की पुष्टि करती हैं उनको काटती नहीं।

आकृतिः सत्या मनसो मे अस्तु। अथर्व. 5.3.4

मेरे मन के संकल्प सत्य सिद्ध हों।

एनो मा नि गां कतमच्चनाहम्। अथर्व. 5.3.4

मैं किसी भी पाप में ना फँसूँ।

पुनः स्मरण –

स्वाध्याय पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारूप

प्रान्तीय सभा द्वारा ज्ञानवर्धक एक श्रेष्ठ योजना

मान्यवर,

आर्य समाज की मान्यता का आधार वेदादि शास्त्र हैं, आर्य समाज के सिद्धान्त पूर्णतः इन्हीं आर्ष ग्रंथों पर आधारित हैं। यह भी पूर्ण सत्य एवं सर्वमान्य है कि वेद और वैदिक साहित्य समाज में उपलब्ध समस्त विचारधाराओं से श्रेष्ठ व सत्य पर आधारित हैं।

महर्षि दयानन्द रचित ग्रंथों के पठन–पाठन में लेशमात्र भी वैदिक विचारधारा से हटकर कुछ नहीं है। जब तक इन ग्रंथों का आर्यजन स्वाध्याय करते रहे तब तक आर्य समाज की मान्यताओं में स्थायित्व व एक दृढ़ता थी, व्यक्ति समर्पित व पक्के मिशनरी थे। स्वाध्याय की कमी से व्यक्ति व परिवार आर्य विचारधारा के साथ नहीं जुड़ रहे हैं, आज शिथिलता अथवा बिखराव की स्थिति बनते जा रही है।

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती है कम से कम उनके रचित ग्रंथों की जानकारी और उनका पठन पाठन भी हमारी विचारधारा को तरोताजा बनाए रखता है। महर्षि के अनमोल तर्क संगत विचार पढ़कर दृढ़ता आती है। अपनी विचारधारा में दृढ़ता के लिए यह क्रम आर्यों में निरन्तर चलते रहना चाहिए।

इसी भावना से महर्षि की अनमोल रचना ऋग्वेदभाष्यभूमिका का प्रारंभ स्वाध्याय घर–घर में हो सके, इस हेतु डॉ. सोमदेवजी शास्त्री, मुम्बई ने इस पुस्तक का क्रमबद्ध स्वाध्याय करने की दृष्टि से एक अत्यन्त प्रसंशनीय कार्य प्रारंभ किया। जिसमें अलग–अलग 10 भागों में प्रतिमाह ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के संबंध में जानकारी प्रेषित की जावेगी। इसका एक और बड़ा लाभ होगा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का स्वाध्याय व संग्रहं हमारे परिवारों में हो जावेगा। इसके पष्चात सत्यार्थ प्रकाष, मनुस्मृति, संस्कार विधि, उपनिषद आदि के संबंध में यही क्रम प्रारंभ किया जावेगा।

इसकी उपयोगिता और रूची को देखते हुए **आगे एक माह के स्थान पर 15 दिन में प्रारंभ किया जा सकता है।** प्रतिमाह डाक न मिलने पर फोन से या पत्र से यथाषीघ्र सूचित करे ताकि पुनः व्यवस्था की जावें।

यह जानकारी छोटी सी पुस्तिका के रूप में होगी। इसके पीछे ही कुछ प्रश्न उल्लेखित होगें, जिनका उत्तर इसी पुस्तक में से प्राप्त हो जायेगा। स्वाध्याय का सरल रोचक और आकर्षक तरीका इससे अच्छा नहीं हो सकता है।

इसलिए प्रयास यह होना चाहिए कि यह योजना घर–घर में प्रत्येक सनातन धर्मी के पास एवं कम से कम प्रत्येक आर्य परिवार में पहुंचे। कृपया प्रत्येक आर्य परिवार को इसकी जानकारी देवें।

कृपया शीघ्र ही अपनी स्वीकृति नीचे दिए प्रारूप अनुसार धनराशि सहित निम्न पते पर प्रेषित करें।

स्वाध्याय पत्राचार पाठ्यक्रम

आर्य समाज मन्दिर, महू जिला इन्दौर (म. प्र.) 453441
दूरभाष : 07324–273201, 226566, 9826655117

उद्देश्य

"वैदिक वाड्मय के प्रतिरूचि जागृत करके उसके स्वाध्याय के लिये प्रेरित करना तथा तदनुकूल आचरण द्वारा मानव जीवन का लक्ष्य एवं कर्तव्य का बोध कराना।"

नियम

1. पाठ्यक्रम का **सत्र प्रत्येक वर्ष के जनवरी से दिसम्बर 1 वर्ष तक** होगा। 1 वर्ष पश्चात दूसरा पाठ्यक्रम प्रारंभ करेगें। अप्रेल या मई में परिणाम और पुरस्कारों की घोषणा तथा अगले पाठ्यक्रम की सूचना।

2. प्रत्येक अंक के अन्त में पांच प्रश्न होगें जिनका उत्तर अलग कागज पर लिखकर नाम व पता लिखकर मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा कैम्प कार्यालय **आर्य समाज, लुनियापुरा, महू** पर प्रतिमाह भेजना होगा।

3. 80 प्रतिशत या उससे अधिक अंकों के तीन विजेताओं को प्रथम **तीन** पुरस्कार लक्की ड्रा के आधार पर प्रत्येक को **1100/–** का पारितोषिक। 70 प्रतिशत या उससे अधिक अंकों के **तीन** विजेताओं को प्रत्येक तीन को **501/–** का पारितोषिक। 50 प्रतिशत या उससे अधिक अंकों के **तीन** विजेताओं को प्रत्येक को **251/–** का पारितोषिक दिये जायेगें। 40 प्रतिशत या उससे अधिक अंक प्राप्त करने वाले विजेताओं को प्रमाण पत्र दिया जायेगा।

4. मुद्रण एवं डाक व्यय आदि हेतु पाठ्यक्रम का **वार्षिक शुल्क रू. 150/–** है। यह राशि इस फार्म के साथ भेजना आवश्यक है, यह राशि मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा कोष में नगद, चैक अथवा खाता क्रमांक 062510001576 देना बैंक, टी. टी. नगर, भोपाल में भेजी जा सकती है। उसकी जानकारी फार्म में भरकर प्रेषित करें।

5. प्रतियोगियों की आयु सीमा 15 से 25 वर्ष तक।

पाठ्यक्रम में भाग लेने हेतु निम्नलिखित प्रारूप के अनुसार जानकारी देवें।

1. मेरा नाम ________________________________
2. पिता का नाम श्री ________________________________
3. आयु. ____________ शैक्षणिक योग्यता ________________
4. ग्राम/शहर. ________________ तहसील. ________________

जिला ________________ पिन कोड ________________

मोबाईल नम्बर ______________ अथवा दूरभाष नं. ______________

प्रतियोगिता में राशि 150/– .... के द्वारा भेजी है।

दिनांक........................ **हस्ताक्षर**

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का जन्म एवं बोधोत्सव मनाया गया

नीमच। आर्य समाज नीमच मे दिनांक 21/2/2017 को महर्षि दयानन्द जी का 193 वॉ जन्म उत्सव मनाया गया व दिनांक 24/2/2017 को शिवरात्रि पर बोधोत्सव पर्व मनाया गया। इस अवसर पर दिनांक 21/2/2017 को निराश्रित बाल गृह में व 24/2/2017 को मूक बधीर विद्यालय में जाकर बच्चों को फल, मिठाई, बिस्कुट वितरित कर दोनों स्थानों पर महर्षि दयानन्द का चित्र भेंट किया गया। निराश्रित बाल गृह में श्री जगदीश प्रसाद हरित व श्री अर्जुनलाल नरेला ने महर्षि के प्रेरक प्रसंगों को बताया व मूकबधीर स्कूल में भी इसी प्रकार रतलाम संभाग के उप प्रधान श्री बंशीलाल जी व मन्त्री मनोज स्वर्णकार ने महर्षि के सेवा कार्यों को बताया। इससे पूर्व दोनों कार्यक्रम पर आर्य समाज में यज्ञ, भजन, उद्‌बोधन का कार्यक्रम हुआ। इस अवसर पर प्रधान श्री अर्जुनलाल नरेला, उपप्रधान श्री कन्हैया रतावदिया, मन्त्री मनोज स्वर्णकार, उप मन्त्री श्री सुरेशचन्द्र शर्मा, श्री अशोक चौरसिया, सुबोध सोनी, यशवन्त धीर, छोटेलालजी शर्मा, कोषाध्यक्ष चन्द्रप्रकाश शर्मा, श्रीमती एवं श्री हस्तीराम भाटी, श्रीमती एवं श्री प्रवीण आर्य आदि सदस्य उपस्थित रहे।

श्री सुरेशजी शास्त्री, सुरेश आर्य, विनोद आर्य

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा माह अप्रेल में वेद प्रचार कार्यक्रम

1. दिनांक 26/3/2017 ग्राम बोरखेड़ी प्रातः स्थान आर्य वाटिका
2. दिनांक 3/4/2017 ग्राम दतोदा प्रातः, सायं स्थान मण्ड़ी बाजार
3. दिनांक 4/4/2017 ग्राम कनाड़ प्रातः स्थान होली चौक
4. दिनांक 4/4/2017 ग्राम हरसोला सायं, प्रातः स्थान पंचायत चौक
5. दिनांक 5/4/2017 ग्राम जोशी गुराड़िया सायं स्थान श्रीराम मन्दिर
6. दिनांक 6/4/2017 ग्राम गोम खेड़ी प्रातः ।
7. दिनांक 6 से 9/4/17 मुल्ठान प्रातः सायं
8. दिनांक 19/4/2017 .करकी सायं
9. दिनांक 20/4/2017 धरमपुरी सायं
10. दिनांक 21/4/2017 गौतमपुरा सायं

प्रांतीय सभा से प्रचार हेतु पुस्तकें व स्टीकर प्राप्त करें

अगली प्रकाशित होने वाली अन्य पुस्तकें

वेद परमात्मा का दिया हुआ सृष्टि का प्रथम पवित्र ज्ञान है, जो पूर्ण है सबके लिए है, सदा के लिए है, वही सनातन और धर्म का आधार है।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
ईश्वर को मानने से पहले उसे जानना आवश्यक है, ईश्वर वही है जो-सच्चिदानन्दस्वरूप निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य,पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
एक सफल, सुखी, श्रेष्ठ जीवन के लिए मात्र भौतिक सम्पदा धन, सम्पत्ति, मकान ही पर्याप्त नहीं है, आत्मिक सम्पदा, जो आत्मा, मन और बुद्धि की पवित्रता व विकास से प्राप्त होती है, वह भी आवश्यक है।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए। अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना ▪ पढ़ाना और सुनना ▪ सुनाना सब आर्यों (श्रेष्ठ मानवों) का परम धर्म है।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य
...हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थ से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है, आगे भी होगा, उसकी उन्नति तन-मन-धन से सब जने मिल के प्रीति से करें।
महर्षि दयानन्द सरस्वती

॥ ओ३म् ॥
सम्प्रदायों, मजहबों की स्थापना का आधार विभिन्न मानवीय विचार धाराएं हैं, इसलिए वे अनेक हैं। किन्तु धर्म उस एक परमात्मा का ज्ञान हैं, इसलिए सब मनुष्यों का धर्म भी एक है, वही सबको संगठित करता है।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
ईश्वर एक है, उसके गुण-कर्म और स्वभाव अनेक है, इसलिए हम उसे अनेक नामों से पुकारते हैं। किन्तु उसका मुख्य नाम ओ३म् है, उसी का स्मरण करना चाहिए।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
स्तुति, प्रार्थना, उपासना, पूजा हमारा व्यक्तिगत धर्म है, किन्तु पूर्ण धर्म पालन तो व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय और विश्व धर्म के पालन से होता है।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥
प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
आर्य समाज

मानव कल्याणार्थ

आर्य समाज के दस नियम

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरुप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सब से प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

एम.पी.एच.आई.एन. 2003 12367

पंजीयन संख्या म.प्र./भोपाल/32/2015-17

अवितरित रहने पर कृपया निम्न पते पर लौटायें

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा

तात्या टोपे नगर, भोपाल-462003(म.प्र.)

AMIT # 98262-71062

मुद्रक, प्रकाशक, इन्द्र प्रकाश गांधी द्वारा कौशल प्रिन्टर्स, भोपाल से मुद्रित कराकर
मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा कार्यालय, तात्या टोपे नगर, भोपाल से प्रकाशित। संपादक - प्रकाश आर्य, महू